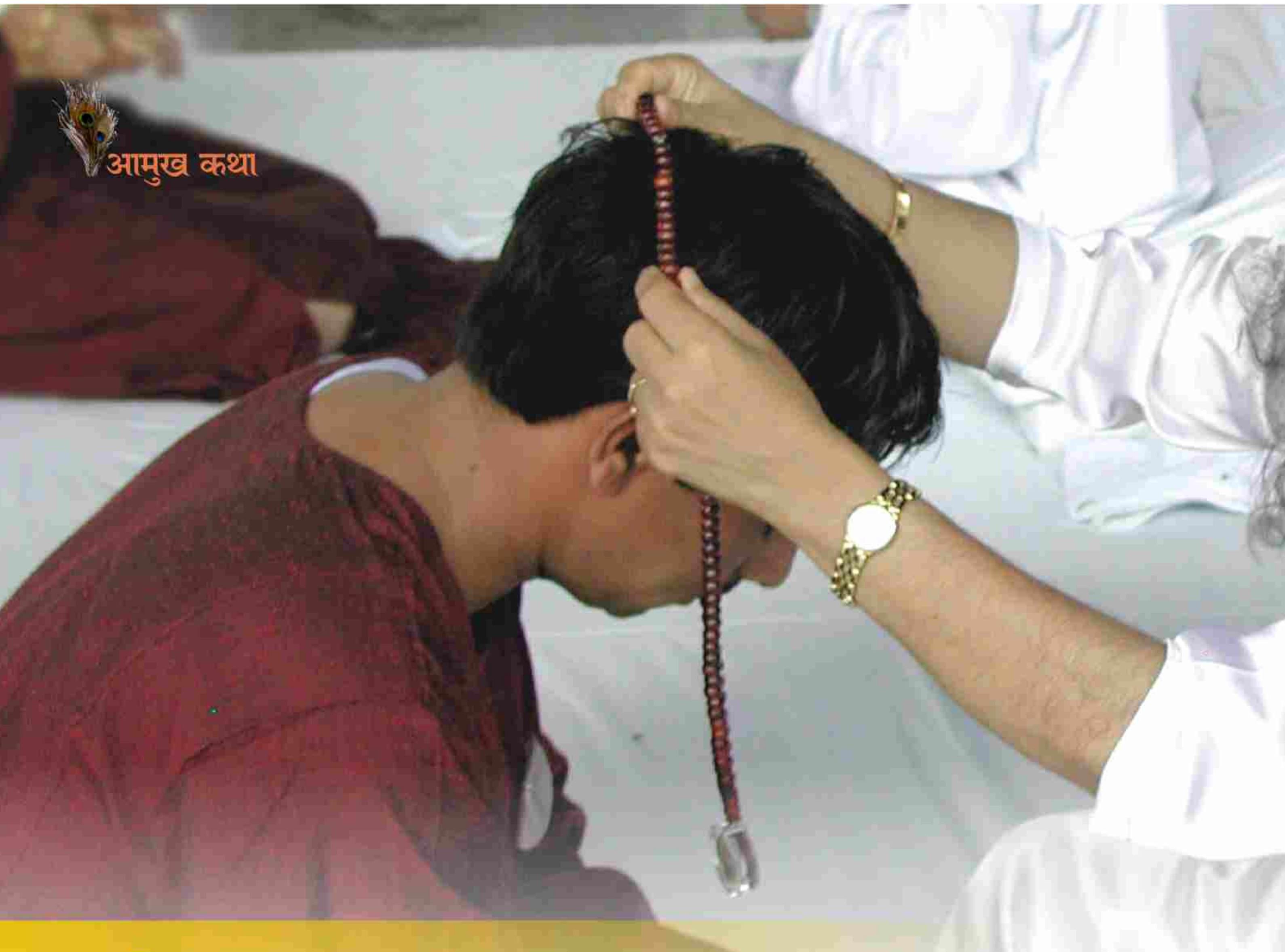

# मेरा संन्यास गत्यात्मक है

*प्रश्न : जब आप अष्टावक्र, बुद्ध या लाओत्से पर बोलते हैं, तब आपकी वाणी में बुद्धि और तर्क का अपूर्व तेज प्रवाहित होता है। लेकिन जब वही आप भक्ति-मार्गी संतों पर बोलते हैं, तब बातें अटपटी होने लगती हैं। ऐसा क्यों है?*

ऐसा इसलिए है कि मैं नही हूं; क्योंकि मैं नहीं बोल रहा हूं।

जब अष्टावक्र बोलते हैं तो उनको ही बोलने देता हूं। जब बुद्ध बोलते हैं तो उनको ही बोलने देता हूं; फिर मैं बीच में नहीं आता। और जब पलटूदास बोलते हैं तो पलटूदास को ही बोलने देता हूं। मैं क्यों बीच में आऊं? जब दरिया को बोलने देता हूं तो दरिया को ही बोलने देता हूं। मैं केवल माध्यम हो जाता हूं।

मैं कोई व्याख्याकार नहीं हूं। ये कोई व्याख्याएं नहीं हैं; ये कोई भाष्य नहीं हो रहे हैं। मैं फिर एक मौका देता हूं कि पलटूदास, फिर से गा लो, फिर से कह लो। बहुत दिन हो गए, लोगों ने तुम्हारी बात नहीं सुनी, बहुत दिन हो गए लोग तुम्हें भूल ही गए। फिर से जी लो मेरे बहाने। मेरे निमित्त फिर से लोगों से बात कर लो।

मैं सिर्फ निमित्त बन जाता हूं।

तो मेरी व्याख्या ऐसी नहीं है जैसी लोकमान्य तिलक की व्याख्या है गीता पर, कि महात्मा गांधी की व्याख्या है गीता पर। उनकी धारणाएं हैं। वे अपनी धारणाओं को गीता में खोजते हैं। मेरी कोई धारणा नहीं है। मैं धारणा शून्य हूं। मैं रिक्त, शून्य-भाव से, जिसकी कहता हूं उसको ही कहने देता हूं।

इसलिए जब बुद्ध पर बोलूंगा तो स्वभावतः बुद्ध की प्रखरता, बुद्ध की स्पष्टता, बुद्ध का तर्क झलकेगा। और जब दरिया पर बोलूंगा या पलटू पर या कबीर पर, तो उनकी अटपटी बातें, उनकी प्रेमपगी बातें, उनकी मस्ती झलकेगी। बुद्ध के साथ मैं बुद्ध हो जाता हूं, पलटू के साथ पलटू हो जाता हूं। अपनी धारणा नहीं डालता हूं। मेरी कोई धारणा नहीं हैं। मैं कोई दार्शनिक नहीं हूं।

इसलिए स्वभावतः तुम्हें बेचैनी मालूम पड़ती होगी कभी-कभी। कभी-कभी तुम्हें विरोधाभास दिखाई पड़ते होंगे, स्वाभाविक। क्योंकि बुद्ध एक ढंग से बोलते हैं, दरिया दूसरे ढंग से बोलते हैं, दादू तीसरे ढंग से बोलते हैं। ऐसा प्रयोग पहले कभी पृथ्वी पर किया नहीं गया, इसलिए तुम्हारी अड़चन को मैं समझता हूं। यह पहली दफा हो रहा है। जैनों ने गीता पर टीका नहीं लिखी। क्यों लिखें? हिंदुओं ने महावीर के वचनों पर भाष्य नहीं किया, उल्लेख ही नहीं किया महावीर का, वचनों पर भाष्य तो अलग। हिंदुओं ने धम्मपद पर नजर नहीं डाली, न ही मुसलमानों ने वेद की चिंता की, न ही ईसाई कुरान पर बोलते हैं। सबकी अपनी बंधी लकीर है। सबकी अपनी धारणाएं हैं। वे अपनी धारणाओं की सीमा के बाहर नहीं जाते।

मेरी कोई धारणा नहीं है; न मैं हिंदू हूं, न मुसलमान हूं, न जैन हूं , न ईसाई हूं। मेरा कोई छोटा-मोटा आंगन नहीं है, यह सारा आकाश मेरा है। इतने बड़े आकाश को जब तुम सुनोगे तो तुम घबड़ाओगे। छोटे-छोटे आंगन को समा लेने की तुम्हारी क्षमता है। इतना बड़ा आकाश तुम्हें मिटा ही जाएगा, तुम्हें पोंछ ही देगा। और वहीं चेष्टा चल रही है।

अगर मैं एक ही धारणा के सूत्रों पर बोलता

और जब दरिया पर बोलूंगा या पलटू पर या कबीर पर, तो उनकी अटपटी बातें, उनकी प्रेमपगी बातें, उनकी मस्ती झलकेगी। बुद्ध के साथ मैं बुद्ध हो जाता हूं, पलटू के साथ पलटू हो जाता हूं। अपनी धारणा नहीं डालता हूं। मेरी कोई धारणा नही हैं। मैं कोई दार्शनिक नहीं हूं।

रहूं...जैसे बुद्ध के ही वचनों पर बोलता रहूं या बुद्ध की परंपरा में आए हुए संतों पर बोलता रहूं—बुद्ध पर बोलूं, बसुबंधु पर बोलूं, नागार्जुन पर बोलूं, बोधिधर्म पर बोलूं, धर्मकीर्ति, चंद्रकीर्ति, बुद्ध की परंपरा में आए संतों पर बोलता रहूं—धीरे-धीरे मैं तुम्हारी बौद्धिक धारणा को निर्णीत कर दूंगा, एक आंगन बना दूंगा। अगर मैं मुसलमान फकीरों पर ही बोलता रहूं, सुनते ही रहे, तो बौद्ध हो जाओगे। अगर मैं मुसलमान फकीरों पर ही बोलता रहूं, तो सुनते-सुनते, सुनते-सुनते तुम अगर मेरे साथ बंध गए तो मुसलमान हो जाओगे।

आज मुसलमान पर बोलता हूं, कल हिंदू पर बोलता हूं, परसों बौद्ध पर बोलता हूं। मैं तुम्हें भी टिकने नहीं देना चाहता, कहीं भी नहीं टिकने देना चाहता। इसके पहले कि तुम टिकने का इंतजाम करते हो, खूंटी इत्यादि गाड़ने लगते हो कि तंबू चढ़ा दें और अब सो जाएं, मैं कहता हूं, बस उठो, सुबह हो गई, चलना है। तुम नाराज भी होते हो कई बार कि ज़रा आराम तो कर लेने

दे। बात जंच रही थी, आपने ही जंचा दी थी कि यह जगह बड़ी सुंदर है, यहां विश्राम करो। आपकी ही बात मान कर...। पहले तो आपकी बात मानने मे झंझट थी, किसी तरह मान कर खूंटी इत्यादि लगा ही रहे थे, चूल्हा इत्यादि जला ही रहे थे कि चलने का वक्त आ गया।

कारण हैं।

*गिरह हमारा सुन्न में, अनहद में बिसराम !*

कहीं टिकने न दूंगा। अनहद में बिसराम। जहां तक हदें हैं, वहां तक नहीं टिकने दूंगा। जिस दिन तुम कहोगे अब आकाश ही हमारा तंबू, पृथ्वी ही हमारा बिछौना, सब धर्म हमारे और हम सब धर्मों के, जिस दिन तुम ऐसा कहोगे—उस दिन कहूंगा, अब मजे से सो जाओ, अनहद में बिसराम आ गया। जब तक तुम्हें देखूंगा कि तुम आंगन बनाते हो, तुम जल्दी में हो बहुत—तुम बड़ी जल्दी करते हो, तुम एक बात पकड़ते हो, कहते हो बस ठीक आ गया घर—जैसे ही मुझे लगा कि आ गया घर, तुम्हें पकड़ में आ रहा है कि मैं तुम्हारे घर को तोड़ने में लग जाता हूं।

तो कभी बुद्धि की बात करता हूं और कभी बुद्धि-अतीत, कभी अटपटी बातें। कभी तर्क की और कभी अतर्क्य की। तुम्हें कहीं रुकने नहीं देना है।

यह प्रयोग पृथ्वी पर पहली बार हो रहा है। इसलिए तुम इससे अपरिचित हो। तुम्हारे अपरिचय के कारण तुम्हारी अड़चन आती है, परेशानी आती है। तुम किसी तरह जल्दी से कोई धारणा बना लेना चाहते हो। तुम कहते हो, कोई भी बात एक दफा ठीक से कह दें कि यह ठीक है, ताकि हम निश्चित हो जाए। तुम तलैया बनना चाहते हो, और मैं चाहता हूं कि तुम सरिता बनो। बस यही मेरे और तुम्हारे बीच संघर्ष है। तुम कहते हो, जल्दी से हमें बता दें कि यह जगह ठीक, आ गया ठीक स्थान, हम एक तलैया बन जाएं और मजे से रहे, फिर हमें सताओ मत; अब फिर यह कहो मत कि आगे बढ़ो, चलते ही चलो, चलते ही चलो।

मैं चाहता हूं : तुम सरिता बनो। क्योंकि सरिता तुम बनो—तो ही सागर मिले। तलैयों को कहीं सागर मिलता है! तलैयों में ही तो तुम पड़े हो और परेशान हो रहे हो। वही तो पलटू कहते हैं कि जैसे-जैसे पानी सूखता जाता है, मीन तड़पती है। तलैया सूखने लगती है, मछली को कोई मारनेवाला पकड़ ले जाता है और तलैया के स्थान पर जहां कभी जल हुआ करता था, सिर्फ सूखी हुई मिट्टी पड़ी रह जाती है, मिट्टी के ढेले पड़े रह जाते है, फटी हुई जमीन पड़ी रह जाती है।

सरिता बनो! बहाव बनो! कहीं रुको मत! कोई जगह नहीं है जहां रुकना है। रुकना ही छोड़ दो। गति बनो गत्यात्मक बनो।

मेरा संन्यास गत्यात्मक है। मेरा शिष्य कहीं रुकेगा नहीं—अनहद के पहले नहीं रुकेगा। और अनहद में पहुंच गए, फिर क्या चलना है! सागर में पहुंच गए। इसलिए इन सारे पड़ावों की बात कर रहा हूं। ये सब घाट आता है, तुम कहते हो बड़ा प्यारा घाट आ गया। मैं उस घाट की खूबँ प्रशंसा भी करता हूं। तुम कहने लगते हो, तब फिर नाव बाध दें, अब उतर जाएं, अब आ गई काशी? मैं कहता हूं अभी रुको, अभी कहां? यह घाट प्यारा है, मगर रुकना नहीं है। इस घाट का आनंद ले लो, जितनी देर गुजरते हो इस घाट पर से, अहोभाव से गुजरो। प्यारा घाट है। मगर पहुंचना है शून्य में, पहुंचना है, पहुंचना है अनहद में।

*गिरह हमारा सुन्न में, अनहद में बिसराम।*

*— ओशो*
*अजहूं चेत गंवार*
*छटवां प्रवचन, आखिरी प्रश्न*
*(पूरा प्रवचन टेप पर भी उपलब्ध है)*

मेरी कोई धारणा नहीं है; न मैं हिंदू हूं, न मुसलमान हूं, न जैन हूं , न ईसाई हूं। मेरा कोई छोटा-मोटा आंगन नहीं है, यह सारा आकाश मेरा है। इतने बड़े आकाश को जब तुम सुनोगे तो तुम घबड़ाओगे। छोटे-छोटे आंगन को समा लेने की तुम्हारी क्षमता है।